Think IAS...

दृष्टि
The Vision

Think Drishti

छत्तीसगढ़ लोक सेवा आयोग (CGPSC)

आधुनिक भारत

(छत्तीसगढ़ के विशेष संदर्भ सहित)

भाग–1

दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम (Distance Learning Programme)

Code: CGPM13

छत्तीसगढ़ लोक सेवा आयोग (CGPSC)

आधुनिक भारत

(छत्तीसगढ़ के विशेष संदर्भ सहित)

भाग–1

दृष्टि The Vision

641, प्रथम तल, डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली-110009
दूरभाष : 8750187501, 011-47532596
टोल फ्री : 1800-121-6260
Web : www.drishtiIAS.com
E-mail : online@groupdrishti.com

पाठ्यक्रम, नोट्स तथा बैच संबंधी updates निरंतर पाने के लिये निम्नलिखित पेज को “like” करें
www.facebook.com/drishtithevisionfoundation
www.twitter.com/drishtiias

CGPCS DLP

विषय सूची (Contents)

1. भारत में यूरोपीय कंपनियों का आगमन **5-12**

1.1 पुर्तगालियों का भारत आगमन 5

1.2 भारत में डचों का आगमन 6

1.3 अंग्रेज़ों का भारत आगमन 7

1.4 भारत में डेनिश का आगमन 8

1.5 भारत में फ्राँसीसियों का आगमन 8

2. अंग्रेज़ों की भारत विजय **13-47**

2.1 बंगाल का अधिग्रहण 14

2.2 आंग्ल-मैसूर संबंध 19

2.3 मराठा 23

2.4 सिंध 26

2.5 पंजाब का अधिग्रहण 27

2.6 अवध 29

2.7 लॉर्ड वेलेजली की सहायक संधि प्रणाली 30

2.8 डलहौज़ी का व्यपगत सिद्धांत 31

2.9 देशी रियासतों के प्रति ब्रिटिश नीति 32

2.10 छत्तीसगढ़ की पूर्व रियासतें एवं जमींदारियाँ 34

3. भारत में ब्रिटिश शासकों की आर्थिक नीति एवं उसका प्रभाव **48-65**

3.1 भारत में ब्रिटिश उपनिवेशवाद के विभिन्न चरण 48

3.2 भारत में अंग्रेज़ों की भू-राजस्व व्यवस्था 50

3.3 धन का बहिर्गमन 57

3.4 विऔद्योगीकरण 59

3.5 कृषि का व्यवसायीकरण 61

3.6 भारत में आधुनिक उद्योगों का विकास 62

4. ब्रिटिश भारत में औपनिवेशिक नीतियाँ **66-94**

4.1 ब्रिटिश भारत में शिक्षा का विकास 66

4.2 भारत में प्रेस का विकास 72

4.3 ब्रिटिश भारत में स्थानीय स्वशासन का विकास 78

	4.4	ब्रिटिश भारत में रेलवे का विकास	81
	4.5	अकाल नीति	83
	4.6	ब्रिटिश साम्राज्य का प्रशासनिक ढाँचा	84
	4.7	अंग्रेजों की विदेश नीति	88
5.		**ब्रिटिश साम्राज्य के विरुद्ध विद्रोह**	**95-130**
	5.1	1857 ई. का विद्रोह	95
	5.2	छत्तीसगढ़ में 1857 की क्रांति	101
	5.3	अन्य जन–आंदोलन	104
	5.4	ब्रिटिश भारत में जनजातीय आंदोलन	106
	5.5	ब्रिटिश भारत में किसान आंदोलन	109
	5.6	छत्तीसगढ़ में श्रमिक, कृषक एवं जनजातीय आंदोलन	115
	5.7	छत्तीसगढ़ के इतिहास के महत्त्वपूर्ण व्यक्तित्व	122
6.		**सामाजिक, सांस्कृतिक तथा धार्मिक सुधार आंदोलन**	**131-155**
	6.1	सामाजिक–धार्मिक सुधार आंदोलन के कारण	131
	6.2	हिंदू धर्म से संबंधित सुधारक संस्थाएँ	133
	6.3	सामाजिक–धार्मिक सुधार आंदोलन के केंद्र में महिलाएँ	139
	6.4	मुस्लिम सुधार आंदोलन	143
	6.5	सिख सुधार आंदोलन	144
	6.6	जाति और समाज सुधार	146
	6.7	ब्रिटिश सामाजिक–सांस्कृतिक नीतियाँ	148
7.		**राष्ट्रवाद का उदय**	**156-165**
	7.1	भारतीय राष्ट्रवाद के उदय के कारण	156
	7.2	भारतीय राष्ट्रीय कॉन्ग्रेस की स्थापना	159
8.		**भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन (प्रथम चरण)**	**166-186**
	8.1	उदारवादी और उग्रवादी राजनीति	166
	8.2	क्रांतिकारी आतंकवाद का प्रथम चरण : 1905–1915 ई.	170
	8.3	बंगाल विभाजन एवं स्वदेशी आंदोलन	175
	8.4	होमरूल आंदोलन	179
	8.5	ब्रिटिश भारत में मज़दूर आंदोलन	182
	8.6	वामपंथी विचारधारा का विकास	184

अध्याय
1

भारत में यूरोपीय कंपनियों का आगमन
(Arrival of European Companies in India)

भारतीय इतिहास में व्यापार-वाणिज्य की शुरुआत हड़प्पा काल से मानी जाती है। भारत की प्राचीन सांस्कृतिक विरासत, आर्थिक संपन्नता, आध्यात्मिक उपलब्धियाँ, दर्शन, कला आदि से प्रभावित होकर मध्यकाल में बहुत से व्यापारियों एवं यात्रियों का यहाँ आगमन हुआ। किंतु 15वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध एवं 17वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध के मध्य भारत में व्यापार के प्रारंभिक उद्देश्यों से प्रवेश करने वाली यूरोपीय कंपनियों ने यहाँ की राजनीतिक, आर्थिक तथा सामाजिक नियति को लगभग 350 वर्षों तक प्रभावित किया। इन विदेशी शक्तियों में पुर्तगाली प्रथम थे। इनके पश्चात् डच, अंग्रेज़, डेनिश तथा फ्राँसीसी आए।

यूरोपीय कंपनियों का भारत आगमन

पुर्तगाली | डच | अंग्रेज़ | डेनिश | फ्राँसीसी

1.1 पुर्तगालियों का भारत आगमन *(Arrival of Portuguese in India)*

यूरोपीय शक्तियों में पुर्तगाली कंपनी ने भारत में सबसे पहले प्रवेश किया। भारत के लिये नए समुद्री मार्ग की खोज पुर्तगाली व्यापारी वास्कोडिगामा ने मई 1498 को भारत के पश्चिमी तट पर अवस्थित बंदरगाह कालीकट पहुँचकर की। वास्कोडिगामा का स्वागत कालीकट के तत्कालीन शासक जमोरिन (यह कालीकट के शासक की उपाधि थी) द्वारा किया गया। तत्कालीन भारतीय व्यापार पर अधिकार रखने वाले अरब व्यापारियों को जमोरिन का यह व्यवहार पसंद नहीं आया, अत: उनके द्वारा पुर्तगालियों का विरोध किया गया।

इस प्रकार हम देखते हैं कि पुर्तगालियों के भारत आगमन से भारत एवं यूरोप के मध्य व्यापार के क्षेत्र में एक नए युग का सूत्रपात हुआ। भारत आने और जाने में हुए यात्रा-व्यय के बदले में वास्कोडिगामा ने करीब 60 गुना अधिक धन कमाया। इसके बाद धीरे-धीरे अन्य पुर्तगालियों ने भारत आना आरंभ कर दिया। भारत में कालीकट, गोवा, दमन, दीव एवं हुगली के बंदरगाहों में पुर्तगालियों ने अपनी व्यापारिक कोठियों की स्थापना की। भारत में द्वितीय पुर्तगाली अभियान पेड्रो अल्वरेज़ कैब्राल के नेतृत्व में सन् 1500 ई. में छेड़ा गया। कैब्राल ने कालीकट बंदरगाह में एक अरबी जहाज को पकड़कर जमोरिन को उपहारस्वरूप भेंट किया। 1502 ई. में वास्कोडिगामा का पुन: भारत आगमन हुआ। भारत में प्रथम पुर्तगाली फैक्ट्री की स्थापना 1503 ई. में कोचीन में की गई तथा द्वितीय फैक्ट्री की स्थापना 1505 ई. में कन्नूर में की गई।

पुर्तगाल से प्रथम वायसराय के रूप में फ्राँसिस्को डी अल्मीडा का भारत आगमन सन् 1505 ई. में हुआ। यह 1509 ई. तक भारत में रहा। उसे पुर्तगाली सरकार की ओर से यह निर्देश दिया गया था कि वह भारत में ऐसे दुर्गों का निर्माण करे जिनका उद्देश्य सिर्फ सुरक्षा न होकर हिंद महासागर के व्यापार पर पुर्तगाली नियंत्रण स्थापित करना भी हो। उसके द्वारा अपनाई गई यह नीति 'नीले या शांत जल की नीति' कहलाई। 1508 ई. में अल्मेडा संयुक्त मुस्लिम नौसैनिक बेड़े (मिस्र + तुर्की + गुजरात) के साथ चौल के युद्ध (Battle of Chaul, 1508) में पराजित हुआ। अगले वर्ष अर्थात् 1509 ई. में अल्मेडा ने इसी संयुक्त मुस्लिम बेड़े को पराजित किया। इसने हिंद महासागर में पुर्तगालियों की स्थिति को मजबूत करने के लिये सामुद्रिक नीति को अधिक महत्त्व दिया।

सन् 1509 में भारत में अगले पुर्तगाली वायसराय के रूप में अल्फांसो द अल्बुकर्क का आगमन हुआ। इसे भारत में पुर्तगाली शक्ति का वास्तविक संस्थापक माना जाता है। इसने कोचीन को अपना मुख्यालय बनाया। अल्बुकर्क ने 1510 ई. में गोवा को बीजापुर के शासक युसुफ आदिलशाह से छीनकर अपने अधिकार क्षेत्र में कर लिया। इसने 1511 ई. में दक्षिण-पूर्व एशिया की महत्त्वपूर्ण मंडी मलक्का तथा 1515 ई. में फारस की खाड़ी में अवस्थित होरमुज पर अधिकार कर लिया। अल्बुकर्क ने पुर्तगाली पुरुषों को पुर्तगालियों की आबादी बढ़ाने के उद्देश्य से भारतीय स्त्रियों से विवाह करने के लिये प्रोत्साहित किया तथा पुर्तगाली सत्ता एवं संस्कृति के महत्त्वपूर्ण केंद्र के रूप में गोवा को स्थापित किया। यह वह समय था, जब पुर्तगालियों ने प्रत्यक्ष रूप से भारतीय राजनीति में हस्तक्षेप करना प्रारंभ कर दिया था।

परीक्षोपयोगी महत्त्वपूर्ण तथ्य

- वर्ष 1593 में भारत में स्थल मार्ग से व्यापार करने का पहला अधिकार पत्र लीवेंट कंपनी को प्राप्त हुआ था।
- लंदन में ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी का गठन 1599 ई. में हुआ था उस समय भारत में अकबर शासन कर रहा था।
- टॉमस रो जहाँगीर से मिलने अजमेर से मांडू आया था।
- मई 1498 को वास्कोडिगामा ने भारत के पश्चिमी तट पर स्थित कालीकट बंदरगाह पहुँचकर भारत एवं यूरोप के बीच नए समुद्री मार्ग की खोज की।
- 1505 ई. में **फ्रांसिस्को द अल्मेडा** भारत में प्रथम पुर्तगाली वायसराय बनकर आया।
- अल्बुकर्क ने 1510 ई. में बीजापुर के शासक **यूसुफ आदिल शाह** से **गोवा** को जीता।
- पुर्तगालियों ने अपनी पहली व्यापारिक कोठी **कोचीन** में स्थापित की।
- 1596 ई. में भारत आने वाला प्रथम डच नागरिक **कारनेलिस डी हाउटमैन** था।
- 1761 ई. में अंग्रेज़ों ने पांडिचेरी को फ्राँसीसियों से छीन लिया।
- इंग्लैंड का दूत टॉमस रो जहाँगीर के साथ अजमेर से मांडू गया था।
- 1763 ई. में हुई पेरिस संधि के द्वारा अंग्रेज़ों ने **चंद्रनगर** को छोड़कर शेष अन्य प्रदेशों को लौटा दिया, जो 1749 ई. तक फ्राँसीसी कब्ज़े में थे, ये प्रदेश भारत की आज़ादी तक फ्राँसीसियों के कब्ज़े में रहे।
- भारत में **गोथिक स्थापत्य कला** की स्थापना का श्रेय पुर्तगालियों को जाता है।
- ईस्ट इंडिया कंपनी के अंग्रेज़ गवर्नर **सर जॉन चाइल्ड** को औरंगज़ेब द्वारा भारत से निष्कासित किया गया था।
- अल्बुकर्क **सती प्रथा** का विरोध करने वाला प्रथम यूरोपीय व्यक्ति था।
- 1805 ई. में अंग्रेज़ों ने डचों को **चिनसूरा** व **मलक्का** के बदले **सुमात्रा द्वीप** देकर भारत पर उनका प्रभाव लगभग समाप्त कर दिया।
- **कैप्टन हॉकिंस** को मुगल बादशाह जहाँगीर ने 400 का मनसब प्रदान किया था।
- **पुर्तगालियों** के विरुद्ध शाहजहाँ ने 1632 ई. में हुगली नगर का घेरा डाला।
- भारत में यूरोपीय शक्तियों द्वारा अपना पहला किला गोवा में निर्मित किया गया।
- पेड्रो अल्वारेज कैब्राल भारत आने वाले द्वितीय पुर्तगाली (वाणिज्यिक) अभियान का नेता था।
- सूती वस्त्र मुगल भारत में अंग्रेज़ी व्यापार की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण वस्तु थी।

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. वांडिवाश के युद्ध (1760) में-
   (a) फ्रेंच ने ब्रिटिश को हराया।
   (b) ब्रिटिश ने डच को हराया।
   (c) ब्रिटिश ने फ्रेंच को हराया।
   (d) डच ने ब्रिटिश को हराया।
2. फ्राँसीसी ईस्ट इंडिया कंपनी संस्थापित हुई थी-
   (a) लुई चौदहवें के शासनकाल में
   (b) लुई तेरहवें के शासनकाल में
   (c) लुई पंद्रहवें के शासनकाल में
   (d) लुई सोलहवें के शासनकाल में
3. निम्नलिखित में से किसने वास्को-डि-गामा का कालीकट में स्वागत किया था?
   (a) गेस्पर कोरिया (b) अल्बुकर्क
   (c) जमोरिन (d) डॉन अलमेडा
4. लंदन में ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी के गठन के समय भारत का निम्नलिखित में से कौन बादशाह था?
   (a) अकबर
   (b) जहाँगीर
   (c) शाहजहाँ
   (d) औरंगज़ेब

उत्तरमाला

1. (c) 2. (a) 3. (c) 4. (a)

अति लघुउत्तरीय प्रश्न (उत्तर लगभग 30 शब्दों में दीजिये)

1. भारत में फ्राँसीसियों की असफलता के कोई चार कारणों का उल्लेख कीजिये। **CGPCS (Mains) 2018**
2. पुर्तगालियों का भारत आगमन कब हुआ?
3. भारत में यूरोपीय कंपनियों के आगमन को क्रमबद्ध तरीके से लिखें।
4. भारत में डचों का आगमन कैसे हुआ?
5. प्रथम कर्नाटक युद्ध क्यों लड़ा गया?

लघुउत्तरीय प्रश्न (उत्तर लगभग 60 शब्दों में दीजिये)

1. भारत में डचों के आगमन और उनके व्यापार पर टिप्पणी कीजिये।
2. अंग्रेज़ों का भारत आगमन कैसे हुआ? स्पष्ट कीजिये।
3. द्वितीय कर्नाटक युद्ध किनके मध्य हुआ और यह क्यों लड़ा गया?
4. तृतीय कर्नाटक युद्ध पर टिप्पणी कीजिये।

दीर्घउत्तरीय प्रश्न (उत्तर लगभग 100/125/175 शब्दों में दीजिये)

1. पुर्तगालियों के भारत आगमन का उल्लेख करते हुए उनकी व्यापारिक नीतियों को स्पष्ट करें।
2. अंग्रेज़ों तथा फ्राँसीसी कंपनियों के मध्य हुए संघर्षों के कारण एवं प्रभाव की विवेचना करें।

नोटः वर्ष 2018 से पूर्व परीक्षा प्रणाली में दीर्घ उत्तरीय प्रश्नों के अंतर्गत 100/250/500 शब्द सीमा वाले प्रश्न पूछे जाते थे, जबकि नवीन परीक्षा प्रणाली के अंतर्गत 100/125/175 शब्दों के प्रश्न पुछे जाते हैं।

अध्याय
2

अंग्रेज़ों की भारत विजय
(British Conquest of India)

अंग्रेज़ों की भारत विजय के संदर्भ में विभिन्न विद्वानों द्वारा मुख्यत: दो मत प्रस्तुत किये जाते हैं। प्रथम मतानुसार, यह विजय निरुद्देश्य, आकस्मिक एवं अनभिप्रेत थी। इस मत के प्रणेताओं का मुख्य तर्क यह है कि ईस्ट इंडिया कंपनी एक व्यापारिक कंपनी थी जो राजनीतिक महत्त्वाकांक्षाओं से बहुत दूर थी। इसका मुख्य उद्देश्य व्यापार करना था किंतु संयोगवश यहाँ की राजनीतिक परिस्थितियों ने उन्हें भारतीय राजनीतिक संघर्ष के लिये प्रेरित किया। परिणामस्वरूप, वे भारतीय राज्यों से युद्ध कर उनका विलय करने के लिये बाध्य हो गए। उन्हें अपनी व्यापारिक महत्त्वाकांक्षाओं की पूर्ति एवं अपने व्यक्तिगत हितों की सुरक्षा के लिये भी यहाँ की क्षेत्रीय शक्तियों से युद्ध करना पड़ा। परिणामत: उन्होंने भारतीय साम्राज्य हासिल कर लिया। दूसरे मतानुसार, अंग्रेज़ों द्वारा एक निश्चित एवं सुनियोजित योजना के तहत भारत का अधिग्रहण किया गया। इस मत के समर्थन में यह तर्क दिया जाता है कि अंग्रेज़ों ने एक निश्चित योजना के अनुसार संगठित होकर एक व्यापारिक कंपनी का गठन किया एवं उसके बाद भारत में प्रवेश किया। उन्होंने धीरे-धीरे अपनी कूटनीतिक चालों का प्रयोग कर अपने राजनीतिक अधिकारों में बढ़ोतरी की तथा अपनी आक्रामक नीतियों से भारतीय राज्यों का अधिग्रहण कर लिया। इस प्रकार साम, दाम, दंड, भेद जैसी सभी नीतियों का प्रयोग करते हुए उन्होंने भारतीय साम्राज्य को हासिल कर लिया।

नवीन स्वायत्त राज्य (अठारहवीं शताब्दी)	
राज्य	**संस्थापक**
हैदराबाद	निज़ाम उल मुल्क (चिन किलिच खाँ)
अवध	सआदत खाँ (बुरहानुलमुल्क)
भरतपुर	चूड़ामन, बदन सिंह
कर्नाटक	सादुतुल्ला खाँ
बंगाल	मुर्शिद कुली खाँ
मैसूर	हैदर अली
जयपुर	जयसिंह
रुहेलखंड (बंगश पठान)	मुहम्मद खाँ बंगश

बिना किसी पूर्वाग्रह के विश्लेषण करने पर हम पाते हैं कि ये दोनों विचार अतिशयोक्तिपूर्ण हैं तथा तर्कसंगत नहीं हैं। यदि व्यवस्थित रूप से विस्तृत विवेचना की जाए तो इन दोनों मतों में तार्किक विश्लेषण का अभाव है। अत: यह कहना ही सही होगा कि अंग्रेज़ों द्वारा भारतीय राज्यों का अधिग्रहण संयोगवश शुरू हुआ, किंतु कुछ समय के बाद अंग्रेज़ों की राजनीतिक महत्त्वाकांक्षाएँ जाग्रत हो उठीं। परिणामस्वरूप उन्होंने भारतीय राज्य की कल्पना के उद्देश्य से प्रेरणा लेकर अपनी राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक तथा वैदेशिक नीतियों का निर्माण किया। अंग्रेज़ों ने उस दिशा में भी अपने कदम बढ़ाए जो भारतीय राज्यों के विरुद्ध युद्ध करने एवं उनके विलय के उद्देश्यों से प्रेरित थी। उदाहरणार्थ, लॉर्ड वेलेजली की 'सहायक संधि', लॉर्ड हेस्टिंग्स की 'आक्रामक नीति' तथा लॉर्ड डलहौज़ी की 'हड़प नीति' इत्यादि ऐसे ही उद्देश्य थे।

17वीं सदी में भारत से लाभ कमाने के उद्देश्य से ईस्ट इंडिया कंपनी का भारत आगमन हुआ। भारतीय व्यापार पर एकाधिकार स्थापित करने की होड़ में अंग्रेज़ों को अन्य यूरोपीय कंपनियों तथा भारतीय राज्यों के विरोध का भी सामना करना पड़ा, किंतु भारतीय राज्यों के आपसी मतभेद और षड्यंत्रों ने ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी को उनके ऊपर अपना वर्चस्व स्थापित करने में महत्त्वपूर्ण योगदान एवं अवसर प्रदान किया। अंग्रेज़ों द्वारा एक लंबी अवधि (लगभग सौ वर्ष) के बाद भारतीय राज्यों का विलय पूर्ण हुआ। इसमें कई कारकों ने सहयोग दिया जो कि निम्नवत् हैं-

- यूरोप में हो रहे तत्कालीन राजनीतिक परिवर्तन
- भारत की अस्थिर राजनीतिक परिस्थितियाँ
- शीघ्रातिशीघ्र लाभ अर्जित करने की आकांक्षा
- ब्रिटिश प्रशासकों एवं गवर्नर जनरलों की व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षाएँ
- राष्ट्र के प्रति शूरवीरता की भावना।

अध्याय 3

भारत में ब्रिटिश शासकों की आर्थिक नीति एवं उसका प्रभाव (Economic Policy of British Rulers and its Impact in India)

भारतीय अर्थव्यवस्था पर ब्रिटिश प्रभाव मुगल शासक औरंगज़ेब की मृत्यु के बाद सहज ही परिलक्षित होने लगा था। उत्तरवर्ती मुगल शासकों द्वारा तत्कालीन यूरोपीय व्यापारियों को दी गई उदारतापूर्वक रियायतों ने स्वदेशी व्यापारियों के हितों को नुकसान पहुँचाया। साथ ही व्यापार और वाणिज्यिक व्यवस्था भी कमज़ोर पड़ती गई। ऐसी स्थिति में यहाँ की घरेलू अर्थव्यवस्था पर नकारात्मक प्रभाव पड़ना स्वाभाविक ही था।

अंग्रेज़ों ने प्लासी (1757 ई.) और बक्सर (1764 ई.) के युद्धों के बाद बंगाल की समृद्धि पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया। फलतः भारतीय अर्थव्यवस्था अधिशेष तथा आत्मनिर्भरतामूलक अर्थव्यवस्था से औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था में परिवर्तित हो गई। प्लासी के युद्ध के बाद बंगाल के अंतर्देशीय व्यापार में अंग्रेज़ों की भागीदारी बढ़ गई। कंपनी के कर्मचारियों ने व्यापार के लिये प्रतिबंधित वस्तुओं, जैसे– नमक, सुपारी और तंबाकू के व्यापार पर भी अधिकार कर लिया। बंगाल विजय से पूर्व अंग्रेज़ी सरकार ने अपने कपड़ा उद्योग के संरक्षण के लिये विविध प्रयास किये। इनमें भारत से आने वाले सूती कपड़ों के आयात पर आयात कर; भारतीय रेशमी एवं छपे या रँगे हुए वस्त्रों के प्रयोग पर इंग्लैंड में प्रतिबंध आदि प्रमुख हैं। भारतीय अर्थव्यवस्था को ब्रिटिश औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था में परिवर्तित करने के पीछे ब्रिटिश सरकार का मुख्य उद्देश्य अपने उद्योगों के लिये अच्छा व सस्ता माल प्राप्त करना और अपने उत्पादों को भारतीय बाज़ार में ऊँची कीमतों पर बेचना था।

3.1 भारत में ब्रिटिश उपनिवेशवाद के विभिन्न चरण *(Different Stages of British Colonialism in India)*

उपनिवेशवाद एक ऐसी संरचना होती है, जिसके माध्यम से किसी भी देश का आर्थिक शोषण तथा उत्पीड़न होता है। इस संरचना के अंतर्गत कई प्रकार के विचारों, व्यक्तित्वों और नीतियों का समावेश किया जा सकता है। यही उपनिवेशवादी संरचना वास्तव में उपनिवेशवादी नीति का निर्णायक तत्त्व होता है। उपनिवेशवाद का मूल तत्त्व 'आर्थिक शोषण' में निहित होता है, लेकिन किसी उपनिवेश पर राजनीतिक कब्ज़ा बनाए रखने की दृष्टि से इसका भी अपना महत्त्व होता है।

भारत में ब्रिटिश उपनिवेशवाद मुख्यतः तीन चरणों से गुज़रा। ये विभिन्न चरण भारत के आर्थिक अधिशेष को हड़पने के विभिन्न उपायों पर आधारित थे। रजनीपाम दत्त ने अपनी कृति 'इंडिया टुडे' में भारतीय औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था का अच्छा चित्रण किया है। इसमें उन्होंने कार्ल मार्क्स के भारत में ब्रिटिश उपनिवेशवाद और आर्थिक शोषण के जिन तीन चरणों वाले सिद्धांत को आधार बनाया है, वे निम्नवत् हैं–

उपनिवेशवाद के चरण

- वाणिज्यिक पूंजीवादी चरण (1757–1813 ई.)
- औद्योगिक पूंजीवादी चरण (1813–1858 ई.)
- वित्तीय पूंजीवादी चरण (1858 ई. के बाद)

आरंभिक चरण अर्थात् 17वीं और 18वीं शताब्दी में ब्रिटिश उपनिवेशवाद का मुख्य उद्देश्य भारत के साथ व्यापार करने के बहाने उसे लूटना ही था। आगे चलकर 19वीं शताब्दी में भारत का प्रयोग ब्रिटेन में बनी हुई औद्योगिक वस्तुओं के लिये मुख्य बाज़ार के रूप में किया गया। 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में और 20वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में भारत स्थित ब्रिटिश उद्योगपतियों द्वारा देश में पूंजी-विनियोग की प्रक्रिया आरंभ की गई। इसे भारतीय श्रमिकों के बड़े पैमाने पर शोषण का आरंभ कहा जा सकता है।

अध्याय
4

ब्रिटिश भारत में औपनिवेशिक नीतियाँ (Colonial Policies in British India)

ब्रिटिश शासन ने भारत की आर्थिक व्यवस्था के साथ-साथ सामाजिक व्यवस्था को भी गंभीर रूप से प्रभावित किया। ब्रिटिश शासन के साथ ही भारतीय समाज में एक नई सामाजिक व्यवस्था सामने आई जिसका आधार जाति व श्रम न होकर व्यावसायिक उपलब्धियों तथा मुक्त प्रतिस्पर्द्धा पर आधारित नई आर्थिक शक्तियाँ थीं। अंग्रेज़ों ने अपने राज्य विस्तार एवं प्रशासनिक तंत्र के साथ-साथ भारत के संदर्भ में सामाजिक-सांस्कृतिक नीतियों का विकास किया, जो ब्रिटिश औपनिवेशिक हितों के अनुसार समय-समय पर परिवर्तित होती रहीं। ब्रिटिश शासन ने समाज के विभिन्न वर्गों, यथा-ज़मींदार वर्ग, देशी राजे-रजवाड़े, कृषक वर्ग, पूंजीपति वर्ग, मज़दूर वर्ग, नारी वर्ग, आदिवासी वर्ग आदि को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित किया। साथ ही अंग्रेज़ों के शासन ने भारत की शिक्षा प्रणाली, प्रेस, स्थानीय स्वशासन, लोक-सेवा तथा विदेश नीति को भी गंभीर रूप से प्रभावित किया। भारत में ब्रिटिश शिक्षा नीति ब्रिटिश औपनिवेशिक हितों के अनुकूल परिचालित होती थी, क्योंकि अंग्रेज़ों की शिक्षा नीति का उद्देश्य एक ऐसा वर्ग तैयार करना था जो ब्रिटिश औद्योगिक बाज़ार का भारत में विस्तार कर सके। ब्रिटिश शासनकाल के दौरान भारत में मानवजनित अकालों की संख्या बढ़ी किंतु अंग्रेज़ों द्वारा बनाई गई अकाल नीति का ज़ोर केवल उत्पादन तथा कार्य-दिवस पर ही था, श्रमिकों की सुविधाओं पर नहीं। इस काल में लोकतंत्र का चौथा स्तंभ कहा जाने वाला मीडिया, प्रेस, जनसंचार साधन आदि का भी संकुचित विकास हुआ। सिविल सेवाओं में तो भारतीयों को इस परीक्षा के योग्य ही नहीं समझा जाता था, किंतु कुछ राष्ट्रवादी नेताओं के अथक प्रयत्नों से भारतीयों को भी सिविल सेवा की परीक्षा देने का मौका मिला।

4.1 ब्रिटिश भारत में शिक्षा का विकास *(Development of Education in British India)*

ईस्ट इंडिया कंपनी प्रारंभ में एक विशुद्ध व्यापारिक कंपनी थी जिसका उद्देश्य व्यापार करके केवल अधिक-से-अधिक लाभ कमाना था। 1764 ई. के बक्सर युद्ध तक कंपनी की कोई शिक्षा नीति नहीं थी, फिर भी ईसाई मिशनरी, जो व्यापारियों के साथ-साथ भारत में आ गए थे, ने भारतीय हिंदू-मुस्लिम समुदाय के सामाजिक और धार्मिक रीति-रिवाज़ों पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की। **हिंदुओं और मुसलमानों को संबोधन** शीर्षक से छापी गई पुस्तिका में अंग्रेज़ मिशनरियों द्वारा मुहम्मद साहब को एक **झूठा-पैगंबर** कहा गया तथा हिंदू धर्म को केवल मूर्ति-पूजा, अंधविश्वास तथा अज्ञान का पुंज कहा गया था। इन मिशनरियों का मुख्य उद्देश्य हिंदुओं और मुसलमानों को ईसाई बनाना था। कई विदेशी सहायता-प्राप्त पादरियों ने भारतीय समाज के पिछड़े हुए और कमज़ोर वर्गों को अपनी ओर आकर्षित करने के लिये धर्मार्थ औषधालय, अनाथालय और पाठशालाएँ भी खोलीं जहाँ निःशुल्क विद्या के अतिरिक्त भोजन और वस्त्र भी दिये जाते थे। दूसरी ओर, शिक्षा के प्रोत्साहन एवं विकास हेतु व्यक्तिगत स्तर पर भी कुछ प्रयास किये गए। ऐसे प्रयासों के कुछ प्रमुख उदाहरण इस प्रकार हैं:-

- 1781 ई. में **वारेन हेस्टिंग्स** द्वारा **कलकत्ता मदरसा** स्थापित किया गया, जिसका उद्देश्य मुस्लिम कानूनों तथा इससे संबंधित अन्य विषयों की शिक्षा देना था।
- 1791 ई. में बनारस के ब्रिटिश रेज़ीडेंट **जोनाथन डंकन** के प्रयासों से हिंदू-विधि एवं दर्शन का अध्ययन करने के लिये **बनारस में संस्कृत कॉलेज** की स्थापना की गई।
- 1800 ई. में लॉर्ड वेलेजली द्वारा असैनिक अधिकारियों की शिक्षा के लिये **फोर्ट विलियम कॉलेज** की स्थापना की गई जिसका उद्देश्य कॉलेज में अधिकारियों को विभिन्न भारतीय भाषाओं तथा भारतीय रीति-रिवाज़ों की शिक्षा प्रदान करना था, किंतु 1802 ई. में डायरेक्टरों के आदेश पर यह कॉलेज बंद कर दिया गया।

अध्याय 5

ब्रिटिश साम्राज्य के विरुद्ध विद्रोह (Revolts Against British Empire)

भारत में ब्रिटिश राज की स्थापना महज़ एक घटना ही नहीं थी, बल्कि यह भारतीय अर्थव्यवस्था और समाज के औपनिवेशीकरण की लंबी प्रक्रिया से गहरे रूप में संबद्ध थी। इस प्रक्रिया ने हर स्तर पर भारतीय समाज में असंतोष और क्षोभ को जन्म दिया था, जिसके कारण अंग्रेज़ों को लगातार प्रतिरोध का सामना करना पड़ा। जनता के इस प्रतिरोध को हम नागरिक विद्रोह, आदिवासी विद्रोह और किसान आंदोलन आदि में बाँट सकते हैं।

5.1 1857 ई. का विद्रोह *(Revolt of 1857 AD)*

भारत के इतिहास में 1857 ई. का विद्रोह एक युगांतकारी घटना मानी जाती है। 1757 ई. की प्लासी की लड़ाई और 1857 ई. के विद्रोह के बीच ब्रिटिश शासन ने अपने 100 वर्ष पूरे कर लिये थे। इन 100 वर्षों में कई बार ब्रिटिश सत्ता को चुनौतियाँ मिलीं, किंतु 1857 ई. का विद्रोह एक ऐसी चुनौती थी, जिसने भारत में अंग्रेज़ी शासन की जड़ों को हिलाकर रख दिया।

विद्रोह का स्वरूप *(Nature of the Revolt)*

1857 ई. के विद्रोह के संबंध में भिन्न-भिन्न विचार व्यक्त किये गए हैं। साम्राज्यवादी इतिहासकारों ने एकपक्षीय तर्क देते हुए इसे सिर्फ 'सैनिक विद्रोह' की संज्ञा दी है तो कुछ ने इसे दो नस्लों अथवा दो धर्मों का युद्ध बताया है। इस मत के विरुद्ध राष्ट्रवादी इतिहासकारों ने इसे 'राष्ट्रीय विद्रोह' की संज्ञा दी है तो किसी ने इसे 'स्वतंत्रता संग्राम का प्रथम युद्ध' बताया है। तथापि, इस विद्रोह के वास्तविक स्वरूप को जानने के लिये तथा किसी निष्कर्ष पर पहुँचने से पूर्व इन सभी अवधारणाओं की तथ्यों के साथ तार्किक व्याख्या आवश्यक होगी।

वस्तुत: 1857 ई. का विद्रोह सिपाहियों के विद्रोह के रूप में प्रारंभ हुआ। अत: साम्राज्यवादी विचारधारा के इतिहासकार सर जॉन लॉरेंस एवं सर जॉन सीले ने इसे सैनिक विद्रोह की संज्ञा दी है, परंतु यह व्याख्या तार्किक प्रतीत नहीं होती। निस्संदेह, इस विद्रोह का प्रारंभ सिपाहियों ने किया, परंतु सभी स्थानों पर यह सिर्फ सेना तक सीमित नहीं रहा, बल्कि इसमें जनता के हर तबके की हिस्सेदारी रही। अवध और बिहार के कुछ इलाकों में तो इसे पूरा जन-समर्थन मिला। इंग्लैंड के रूढ़िवादी नेता बैंजामिन डिज़राइली ने इस विद्रोह को एक राष्ट्रीय विद्रोह कहा, किंतु उनका यह मानना भी तर्कसंगत नहीं लगता, क्योंकि उस समय भारत किसी राष्ट्र के रूप में संगठित नहीं था, बल्कि वह जन-असंतोष, निष्ठा एवं उद्देश्यों के आधार पर विभाजित था।

एक अन्य साम्राज्यवादी इतिहासकार एल. आर. रीस ने इसे धर्मांधों का ईसाई धर्म के विरुद्ध युद्ध बताया है, किंतु उनके इस तथ्य में सत्य का अंश ढूंढना मुश्किल ही होगा। यद्यपि इस संघर्ष में भिन्न-भिन्न धर्मों को मानने वालों ने दोनों ओर से युद्ध किया तथा अपनी कमियों एवं अन्यायों को छुपाने के लिये धर्म का सहारा लिया, तथापि विद्रोह के अंत में निश्चय ही ईसाई जीते, न कि ईसाई धर्म। एक अन्य विद्वान टी. आर. होम्स की अवधारणा, जिसके अनुसार उन्होंने इस युद्ध को बर्बरता और सभ्यता के बीच युद्ध कहा है, भी तार्किक प्रतीत नहीं होती, क्योंकि इसमें संकीर्ण जाति-भेद झलकता है। दूसरी ओर, 1857 ई. के संघर्ष में अंग्रेज़ी सेनानायक सर जेम्स आउट्रम और टेलर ने इस विद्रोह को हिंदू-मुस्लिम षड्यंत्र का परिणाम बताया है। इनका मानना था कि यह विद्रोह मूलत: मुस्लिम षड्यंत्र था, जिसमें हिंदुओं की शिकायतों का लाभ उठाया गया। बहरहाल, विश्लेषण करने पर हम पाते हैं कि यह व्याख्या तर्कसंगत नहीं है, क्योंकि बहादुरशाह जफर ने तो इस विद्रोह को केवल नेतृत्व प्रदान किया था, जिसका कारण महज़ इतना था कि वे मुगल साम्राज्य के सांकेतिक प्रतीक थे।

इस विद्रोह को भारत के राष्ट्रीय नेताओं एवं राष्ट्रवादी इतिहासकारों ने राष्ट्रीय विद्रोह बताने की कोशिश की, ताकि इसके माध्यम से राष्ट्रवादी विचार को जाग्रत किया जा सके। इस दिशा में शुरुआत वी. डी. सावरकर द्वारा की गई, जिन्होंने इसका वर्णन 'सुनियोजित राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम' के रूप में किया तथा इसे सिद्ध करने का प्रयास किया। उनके अनुसार,

अध्याय 6

सामाजिक, सांस्कृतिक तथा धार्मिक सुधार आंदोलन (Social, Cultural and Religious Reform Movements)

ब्रिटिश शासन के दौरान शुरू की गई नई सामाजिक, आर्थिक एवं प्रशासनिक प्रणाली ने भारतीय समाज के आधारभूत ढाँचे में आमूलचूल परिवर्तन ला दिया। परिणामस्वरूप, पुरातन एवं नई व्यवस्था के संघर्ष ने भारतीय समाज में एक आंतरिक उथल-पुथल को जन्म दिया जिसकी परिणति सामाजिक सुधार आंदोलनों के रूप में देखने को मिली। भारत में पाश्चात्य शिक्षा (Western Education) का आरंभ भी सामाजिक-सांस्कृतिक जागरण का एक महत्त्वपूर्ण कारण था। इस सामाजिक-सांस्कृतिक जागरण में पाश्चात्य शिक्षा प्राप्त व्यक्तियों ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। इन लोगों ने पाश्चात्य लोकतंत्र, स्वतंत्रता, समानता एवं न्याय के आधारभूत सिद्धांतों के साथ-साथ तार्किक, वैज्ञानिक एवं मानवतावादी मूल्यों को भी अपनाया था। इन मूल्यों से प्रभावित होकर इस वर्ग ने तत्कालीन भारतीय समाज की रूढ़ियों और जड़ताओं को खत्म करने का प्रयास किया। उन्होंने अस्पृश्यता, जातिवाद, सामाजिक विषमता, कर्मकांड, अंधविश्वास आदि का विरोध करते हुए नई शिक्षा के माध्यम से समाज में आधारभूत परिवर्तन लाने का प्रयास किया। 19वीं सदी में इस सांस्कृतिक जागरण के प्रस्फुटन को पश्चिमी देशों द्वारा प्रचारित की जा रही अपनी जातीय, भाषायी एवं सांस्कृतिक श्रेष्ठता के विरुद्ध भारतीयों की प्रतिक्रिया के रूप में भी देखा जा सकता है। वास्तव में, यही वह ब्रिटिश दंभ था जिसने भारतवासियों को पुनः अपने अतीत के गौरवशाली पृष्ठों को पलटने और उसकी पुनर्व्याख्या करने को प्रेरित किया।

6.1 सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलन के कारण *(Causes of Social-Religious Reform Movement)*

सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलन के कारण

सामाजिक | सांस्कृतिक | आर्थिक | राजनीतिक

सामाजिक कारण

- ब्रिटिश शासन में अंग्रेज़ी शिक्षा के प्रसार से भारतीय बुद्धिजीवी वर्ग ने पाश्चात्य उदारवादी विचारधारा से प्रभावित होकर भारतीय सामाजिक ढाँचे एवं संस्कृति में विद्यमान कमज़ोरियों को दूर करने का प्रयास किया।
- ब्रिटिश सरकार द्वारा समाज-सुधार के लिये बनाए गए कानून भी सामाजिक-आर्थिक सुधार आंदोलन का कारण बने।
- ईसाई मिशनरियों के द्वारा ईसाई संस्कृति के प्रसार पर बल, प्रतिक्रियास्वरूप भारतीयों द्वारा अपनी संस्कृति एवं धर्म के प्रति पुनरुत्थान प्रक्रिया पर बल दिया गया।
- समाचार-पत्र, पत्र-पत्रिकाओं आदि के द्वारा अंग्रेज़ों की व्यवहारहीनता, शोषण एवं क्रूरता का ज्ञान भारतीयों को हुआ। अतः भारतीयों ने अपने समाज व धर्म की रक्षा हेतु प्रयत्न आरंभ किये।

सांस्कृतिक कारण

- प्राच्यवादियों ने भारतीय अतीत और गरिमा का गुणगान किया, फिर अतीत की गरिमा पर बल देकर भारतीयों का ध्यान अपनी संस्कृति और परंपरा की ओर आकृष्ट किया।
- 19वीं शताब्दी में इस सांस्कृतिक जागरण के प्रस्फुटन का एक कारण पश्चिमी देशों द्वारा प्रचारित की जा रही अपनी जातीय, भाषायी एवं सांस्कृतिक श्रेष्ठता के विरुद्ध भारतीयों की प्रतिक्रिया भी थी।

अध्याय **7**

राष्ट्रवाद का उदय (Rise of Nationalism)

राष्ट्रवाद कोई अचानक उत्पन्न होने वाली विचारधारा नहीं है बल्कि यह एक दीर्घकालिक विकासशील प्रक्रिया है। राष्ट्र के लिये एक ऐसी भावना का होना आवश्यक है जो व्यक्तियों के समूह को आत्मिक रूप से जोड़ती है और जब राष्ट्र व्यक्ति की पहचान बन जाता है तो राष्ट्रीयता जन्म लेती है और जब राष्ट्रीयता एक विचारधारा का रूप ले लेती है तब राष्ट्रवाद का उदय होता है। यही विचारधारा राष्ट्रीय आंदोलन या स्वतंत्रता आंदोलन की उत्पत्ति का महत्त्वपूर्ण कारक बनता है।

कुछ इतिहासकार भारत में राष्ट्रवाद की उत्पत्ति को प्रेरण-अनुक्रियावाद से स्पष्ट करते हैं जिसका आशय है- ब्रिटिश सरकार ने अपने हितों के लिये भारत में जो व्यवस्थाएँ लागू कीं, भारतीयों ने उसी पर अनुक्रिया कर राष्ट्रवादी भावना को विकसित किया। उल्लेखनीय है कि भारत में राष्ट्रवाद की उत्पत्ति एक आधुनिक संकल्पना मानी जाती है। भारत में जैसे-जैसे औपनिवेशिक शासन विभिन्न अवस्थाओं से गुज़रा वैसे-वैसे भारतीय राष्ट्रवाद भी विकसित होता गया। 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में राष्ट्रीय राजनीतिक चेतना बहुत तेज़ी से विकसित हुई और भारत में एक संगठित राष्ट्रीय आंदोलन का सूत्रपात हुआ। इसी समय दिसंबर 1885 में भारतीय राष्ट्रीय कॉन्ग्रेस की स्थापना हुई, जिसके नेतृत्व में भारतीयों ने एक लंबा और साहसपूर्ण संघर्ष चलाया और अंततः 15 अगस्त, 1947 को देश को ब्रिटिश दासता से मुक्ति दिलाई।

7.1 भारतीय राष्ट्रवाद के उदय के कारण *(Causes of Rise of Indian Nationalism)*

भारत में राष्ट्रीय आंदोलन अथवा राष्ट्रवाद का उदय अनेक कारणों तथा परिस्थितियों का परिणाम था, जिन्हें निम्नलिखित रूपों में देखा जा सकता है-

विदेशी आधिपत्य *(Foreign Dominance)*

- आधुनिक भारतीय राष्ट्रवाद बुनियादी तौर पर विदेशी आधिपत्य की चुनौती के जवाब के रूप में उभरा। स्वयं ब्रिटिश शासन की परिस्थितियों ने भारतीय जनता में राष्ट्रीय भावना विकसित करने में सहायता की।
- राष्ट्रवाद की जड़ें भारतीय जनता के हितों तथा भारत में ब्रिटिश हितों के टकराव में थीं। भारतीय समाज के प्रत्येक वर्ग ने यह अनुभव किया कि लंकाशायर के उद्योगपतियों तथा अंग्रेज़ों के दूसरे प्रमुख वर्गों के हितों के लिये उनके अपने हितों का बलिदान दिया जाता है।
- किसान अपने उत्पादन का एक बड़ा हिस्सा भू-राजस्व के रूप में देने से असंतुष्ट थे तथा जब कभी किसान ज़मींदारों और सूदखोरों के दमन के खिलाफ विद्रोह करते तब पुलिस तथा सेना कानून व्यवस्था के नाम पर उनको कुचल दिया करती थी।
- दस्तकार और शिल्पी वर्ग ने यह महसूस किया कि सरकार विदेशी प्रतियोगिता को प्रोत्साहन देकर उनको तबाह कर रही थी तथा उनके पुनर्वास के लिये कोई प्रयास नहीं किया जा रहा था।
- 20वीं शताब्दी में आधुनिक कारखानों, खदानों तथा बागानों के मज़दूरों ने जब कभी मज़दूर ट्रेड यूनियन, हड़ताल, प्रदर्शन तथा संघर्ष आदि के द्वारा स्वयं की स्थिति को सुधारने का प्रयास किया, तब सरकार का पूरा तंत्र उनके खिलाफ उठ खड़ा होता था।
- समाज के कई वर्गों ने यह भली-भाँति समझ लिया था कि बढ़ती बेरोज़गारी का समाधान केवल तीव्र औद्योगीकरण से संभव है जो एक स्वाधीन सरकार द्वारा किया जा सकता है।
- स्वयं ब्रिटिश शासन भारत के आर्थिक पिछड़ेपन का प्रमुख कारण बनता गया और यह भारत के आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, बौद्धिक तथा राजनीतिक विकास में प्रमुख बाधक तत्त्व बन चुका था।

अध्याय
8

भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन (प्रथम चरण)
[Indian National Movement (1st Phase)]

भारत लंबे समय तक ब्रिटिश शासन का उपनिवेश रहा है। ब्रिटेन की औपनिवेशिक नीतियों तथा ब्रिटिश सत्ता से मुक्ति हेतु उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में भारत में राष्ट्रीय चेतना का विकास हुआ और एक संगठित आंदोलन की शुरुआत हुई। भारतीय इतिहास में ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध लंबे समय तक चलने वाले इस आंदोलन को राष्ट्रीय आंदोलन के नाम से जाना जाता है। यद्यपि मई 1857 के विद्रोह को भारतीय स्वतंत्रता का प्रथम संघर्ष माना जाता है, परंतु इसकी औपचारिक शुरुआत 1885 ई. में कॉन्ग्रेस की स्थापना के साथ हुई जो कई उतार-चढ़ाव से गुज़रते हुए 15 अगस्त, 1947 तक अनवरत रूप से जारी रही।

यद्यपि उन्नीसवीं शताब्दी का भारत विभिन्न जाति, धर्म, भाषा और क्षेत्र में विभाजित था तथा ब्रिटिश शासकों ने भी इस विभाजन को बनाए रखने के लिये **फूट डालो, राज करो** की नीति को अपनाया, तथापि भारत एक भौगोलिक इकाई मात्र नहीं था, बल्कि इस विविधता में सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक चेतना भी अंतर्निहित थी, जिसने राष्ट्रीय आंदोलन के आरंभ, विकास एवं सफलता की ओर अग्रसर होने में सहायता प्रदान की। विविधता के मूल में अंतर्निहित यह राष्ट्रीय चेतना ही थी, जिसने राष्ट्रवाद का विकास किया तथा भाषा, धर्म, जाति के बंधन को लाँघते हुए लोगों को एक सूत्र में संगठित किया। हालाँकि यह भी सच है कि अंग्रेज़ों द्वारा स्थापित प्रशासनिक व्यवस्था तथा आधुनिक विचारों के प्रचार-प्रसार ने भी एक सीमा तक राष्ट्रवाद को प्रोत्साहित किया, लेकिन ब्रिटिश शासन का कभी भी यह उद्देश्य नहीं था कि भारत में राष्ट्रवाद का बीजारोपण हो बल्कि उन्होंने अपने औपनिवेशिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिये ही कुछ सुधार किये, जिससे भारतीयों में राष्ट्रीय चेतना का विकास हुआ और वे राष्ट्रीय आंदोलन के लिये प्रेरित हुए।

8.1 उदारवादी और उग्रवादी राजनीति
(Moderate and Extremist Phase of Politics)

भारतीय राष्ट्रीय कॉन्ग्रेस की स्थापना के साथ ही भारत में राष्ट्रीय आंदोलन के एक नए युग का आरंभ हो गया। चूँकि कॉन्ग्रेस का शुरुआती नेतृत्व जिन नेताओं ने किया, उनके स्वभाव एवं कार्य-प्रणाली उदार प्रकृति के थे, इसलिये राष्ट्रीय आंदोलन के प्रथम चरण को उदारवादी चरण के नाम से जाना जाता है। कॉन्ग्रेस के आरंभिक 20 वर्षों के काल को **उदारवादी राष्ट्रीयता** की संज्ञा दी जाती है, क्योंकि इस काल में कॉन्ग्रेस की नीतियाँ काफी उदार थीं। इस समय कॉन्ग्रेस पर समृद्धशाली मध्यवर्गीय बुद्धिजीवियों का प्रभाव था, जिनमें अधिकतर पत्रकार, वकील, इंजीनियर एवं डॉक्टर इत्यादि प्रमुख थे। ये उदारवादी नेता अंग्रेज़ी सरकार के प्रति निष्ठावान थे तथा उन्हें अपना शत्रु नहीं मानते थे। दादाभाई नौरोजी के इन शब्दों से अंग्रेज़ों के प्रति उनकी भावनाओं की मूर्त अभिव्यक्ति का पता चलता है- "हम ब्रिटिश प्रजा हैं, हम अपने हक की मांग कर सकते हैं। अगर हमें ब्रिटेन की सर्वश्रेष्ठ संस्थाओं से वंचित रखा जाता है तो फिर भारत को अंग्रेज़ों के स्वामित्व में रहने से क्या लाभ? यह तो एक और एशियाई निरंकुश शासन मात्र होगा।"

इस समय के उदारवादी नेताओं में फिरोज़शाह मेहता, बदरुद्दीन तैयबजी, व्योमेश चंद्र बनर्जी, सुरेंद्रनाथ बनर्जी, आनंद मोहन बोस और रमेशचंद्र दत्त प्रमुख थे। कालांतर में द्वारिकानाथ गांगुली, एम.जी. रानाडे, वीर राघवाचारी, आनंद चारलू और गोपालकृष्ण गोखले भी इसमें शामिल हो गए।

उग्रवादी राजनीति के बारे में हम इसी अध्याय में आगे पढ़ेंगे।

उदारवादियों की कार्य-प्रणाली *(Working System of Moderates)*

उदारवादियों को नरमपंथी के नाम से भी जाना जाता था, उनकी कार्य-प्रणाली एक विशिष्ट तरीके की थी, जिसमें वे अपने प्रतिवेदनों, भाषणों और लेखों के माध्यम से ब्रिटिश सरकार एवं उनके द्वारा स्थापित अंग्रेज़ी राज की प्रशंसा करते थे

डी.एल.पी. बुकलेट्स की विशेषताएँ

- आयोग के नवीनतम पैटर्न पर आधारित अध्ययन सामग्री।
- पैराग्राफ, बुलेट फॉर्म, सारणी तथा फ्लोचार्ट का उपयुक्त समावेश।
- विषयवस्तु की सरलता, प्रामाणिकता तथा परीक्षा की दृष्टि से उपयोगिता पर विशेष ध्यान।
- प्रत्येक अध्याय के अंत में विगत वर्षों में पूछे गए एवं संभावित प्रश्नों का समावेश।

Website : www.drishtiIAS.com
E-mail : online@groupdrishti.com

DrishtiIAS

YouTube Drishti IAS

drishtiias

drishtithevisionfoundation

641, First Floor, Dr. Mukherjee Nagar, Delhi-110009
Phones : 8750187501, 011-47532596